ICSSR Sponsored

ISSN: 2319-9997

*Journal of Nehru Gram Bharati University, 2024; Vol. 13 (2):96-103*

# काशी की प्राचीन मृणमूर्तिकला के विविध आयाम

**विवेक शुक्ल एवं बीरेन्द्र मणि त्रिपाठी**
प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग
नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय, प्रयागराज

*Received: 28.08.2024 Revised: 20.10.2024 Accepted: 21.11.2024*

**सारांशः**

प्रस्तुत शोध आलेख काशी की प्राचीन मृणमूर्तियों के विविध आयाम विषय का पुनरावलोकन करेगा। इस शोध आलेख को लिखने का मुख्य उद्देश्य काशी की प्राचीन मृणमूर्तिकला का समय व काल स्थान के संबंध में अध्ययन करना। काशी की प्राचीन मृणमूर्तिकला में समय के साथ निरन्तरता व परिवर्तन के तत्व मूर्ति निर्माण तकनीक एवं विषय वस्तु के परिपेक्ष में उद्घाटित हुए उनका विवेचन मुख्य विषय है। प्रस्तुत लेख में मृणमूर्तिकलाकी विषयवस्तु व निर्माण तकनीक में आए परिवर्तनों का अध्ययन किया जाएगा। इस संबंध में राजघाट के उत्खनन से प्राप्त मृणमूर्तियां विशेष रूप से विवेचन का विषय है। काशी के मृणमूर्तिकला के संबंध में विद्वान इतिहासकारों के विचारों एवं प्रतिमा शास्त्री आधारों पर उनका तद्नूकूलतुलनात्मक विवेचन किया जाएगा। निष्कर्ष के तौर पर काशी के प्राचीन मृणमूर्तिकला की सामाजिक– धार्मिक आधार पर सांस्कृतिक परिदृश्यमें उनके अवदान की विवेचना की जाएगी।

**मुख्य शब्दः** मृणमूर्तिकला, उत्खनन, चिपकवां, हैंडमॉडलिंग, मृणमूर्तियां, बोधिसत्व, मातृदेवी

## परिचय

मृणमूर्तिकला के इतिहास में काशी की प्राचीन मृणमूर्तिकला का अपना एक विशिष्ट स्थान है। इसकी प्राचीनता के संदर्भ में पुरातात्विक साक्ष्य हमें राजघाट के उत्खनन से प्राप्त हुए हैं। जो इसकी प्राचीनता को आठवीं शताब्दी ई0 पूर्व के आरंभ तक लेकर जाता है।[1] राजघाट के उत्खनन से प्राप्त मृणमूर्तियां यहां के लोगों की कलाकेप्रति रुचि और निवासियों की धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक, क्रियाकलापों पर विस्तृत प्रकाश डालते हैं।[2] राजघाट के उत्खनन से हमें जो मृणमूर्तियां प्राप्त हुई है जिनकी तिथि 8वींशताब्दी ई0पूर्व संख्या में तो कम है परंतु उन मूर्तियों में उस काल की मृणमूर्तिकला के विभिन्न अवयवों की पूर्ण जानकारी हमें सुलभता से प्रदान करते हैं। इस काल की मृणमूर्तियों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि इस काल के कलाकार ने इन मूर्तियों के निर्माण तकनीक में सांचे का प्रयोग नहीं किया था।[3] जिससे कि इन मूर्तियों में तकनीक के स्तर पर उतनी कुशलता तो

नहीं दिखाई देती है फिर भी सांस्कृतिकअवदान किसी भी प्रकार से कम नहीं है। इन मूर्तियों के निर्माण में तकनीकी प्रवीणता की कमी थी जिसे कलाकार द्वारा अलंकरण के माध्यम से दूर करने का प्रयास किया है।

## क्रियाविधि

प्रस्तुत शोध पत्र मे ऐतिहासिक शोध पद्धति का उपयोग किया गया है। काशी के विविध पुरास्थलों के उत्खनन से प्राप्त मृणमूर्तियों का कलात्मक व ऐतिहासिक अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन मे राजघाट के उत्खनन से प्राप्त मृण मूर्तियों को विशेष रूप से शोध के केंद्र मे रखा गया है।

**साक्ष्य संग्रहणः–** इस शोध पत्र मे प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों का सम्मिलित रूप से प्रयोग किया गया है।

1. प्राथमिक स्रोतः इसके अंतर्गत विवेच्य काल की मृण मूर्तियों का अध्ययन किया गया है। अध्ययन क्षेत्र से संबन्धित प्राथमिक उत्खनन रिपोर्ट, ''राजघाट की उत्खनन रिपोर्ट वॉल्यूम 1 एवं 2 एवं राजघाट का पुरातात्विक उत्खनन रिपोर्ट विशेषांक को अध्ययन मे सम्मिलित किया गया है।

2. द्वितीयक स्रोतः इसके अंतर्गत द्वितीयक स्रोत मे डॉक्टर मोती चन्द्र द्वारा लिखित काशी का इतिहास एवं अल्तेकर द्वारा लिखित हिस्ट्री ऑफ बनारस एवं वासुदेव शरण द्वारा लिखित राजघाट के खिलौनों का एक अध्ययन प्रमुख द्वितीयक स्रोत रहे हैं। साथ ही अध्ययन विषय से संबन्धित महत्वपूर्ण सामयिक शोध आलेखों का भी अध्ययन किया गया है।

## तकनीकः

यहां से प्राप्त सभी नारी मृणमूर्तियोंको इतिहासकारों के एक वर्ग ने मातृदेवी माना है।मातृदेवी की उपासना के संदर्भ में हमेंध्यातव्य है कि यह उपासना वैश्विक संस्कृतियों में भी होती थी। यूरोप से लेकर एशिया तक मातृ देवी की उपासना विभिन्न कालखण्डों में प्रचलित थी। राजघाट के उत्खनन से भी एक खंडित नारी की मूर्ति प्राप्त हुई है जिसे मातृदेवी की मूर्ति के रूप में पहचान गया। इस मूर्ति के विशाल नितम्ब,नग्नता से परिपूर्ण कटिप्रदेश में अलंकृत मेखला जो चिपकवां विधि से चिपकाया हुआ है इस देवी के प्रमुख लक्षण है।[4] इस मूर्ति में नग्नता को प्रमुख रूप से दिखाया गया लेकिन कलाकार की कला प्रवीणता का यह स्पष्ट परिचायक है की नग्नता का भी ऐसी प्रदर्शन किया जो नग्न होते हुएभी नग्ननहीं है।

मृणमूर्ती परंपराः मूर्ति में शालीनता व सौम्यता का भाव है। यह परंपरा हमें आगे भी इस पुरास्थल के प्राप्त होने वाले पुरातात्विक साक्ष्यों से दिखाई देती है जब राजघाट में मौर्य काल के लगभग द्वितीय चरण तक इसी परंपरा में मातृदेवी की मूर्तियों का निर्माण किया जाता रहा। समय प्रवाह के साथ कलाकार भी परिपक्व होता जा रहा था उसे मिट्टी के चयन में इसी परिपक्वता ने आगे बढ़ाया उसने उसी मिट्टी का चयन किया जिसमें मृणमूर्तियोंको अधिक स्थायित्व व कलात्मक सौंदर्य पूर्ण रूप से निखर कर आए। केवल मिट्टी के चयन में ही नहीं अपितुमृणमूर्ती के लिए उसे तैयार करने व एक संतुलित आंच में आवें में पकाने में भी परिपक्वता दिखलाई देती है।[5] इन मृणमूर्तीयोंका रंग पकने के बाद हल्का लाल होता था। (चित्र फलक 1 – 3)

**मृणमूर्ती विषय**

काशी के मृणमूर्तिकारोंने समय के साथ अपने को ढ़ालते हुए समयानुकूल तकनीकी परिवर्तन लाने का भी प्रयास किया। मौर्यकाल के अंतिम चरण में मूर्ति निर्माण की तकनीक में परिवर्तन के तत्व रेखांकित होते हैं।[6] मौर्यकाल में काशी के मूर्तिकारों ने हस्त निर्माण परंपरा को आगे बढ़ाते हुए इसके अंतिम चरण में निर्माण तकनीक में आधारभूत परिवर्तन करके एक नूतन तकनीक का प्रवेष किया जिसमें मूर्तियां हाथ की जगह जब सांचो की सहायता से बनाई जाने लगी।[7]

**निर्माण प्रविधि**

लेकिन सांचोके प्रयोग में भी उतनी कुशलता नहीं आ सकी जिसके कारणकेवल मस्तकतक का ही भाग सांचे से बनाया जाता था बाकी मूर्ति का शेष भाग हैंड मॉडलिंग तकनीक की मदद से ही बनाया जाता था।[8] इस काल में काशी की मृणमूर्तियोंका विषय मुख्य रूप से देश के विभिन्न कला केंद्रों की तरह धर्म से ही अनुप्राणित था।[9] अधिकतर मृणमूर्तियों का निर्माण विषय धार्मिक ही रहा। लौकिकता के विषयों को मूर्ति में उतना स्थान प्राप्त नहीं हुआ जितना धार्मिक व पारलौकिक जीवन के लक्ष्योंके विषय से संबंधित को प्राप्त हुआ।

**धार्मिक प्रभावः**

समय के साथ परिवर्तन जिस तरह निर्माण तकनीक में हुआ उसी तरह विषय की व्यापकता भी समय व काल के साथ विस्तृत होती रही।वृहद्रथ के पतन के पश्चात भारत में राजनीतिक शक्ति के रूप में शुंग राजवंश का प्रादुर्भाव हुआ। जिन्होंने मगध पर लगभग 100 वर्ष तक शासन किया।

काशी क्षेत्र भी उनके साम्राज्य का एक अंग था।10शुंगकाल सांस्कृतिक उपलब्धियों का एक महत्वपूर्ण काल है, इस काल में न केवल प्रस्तर कला में अपितुमृणमूर्तिकला में भी नवीनता व नूतन अवयवों के तत्व दिखाई देते हैं। इसकाल में मृणमूर्तिकला के क्षेत्र में एक व्यापक क्रांति देखने को मिलती है11कला केन्द्रों की व्यापकता व विस्तार ने इसमें अपनी प्रमुख रूप से भूमिका निभाई। इस काल में मृणमूर्तिकला में एक देशव्यापी शैली का जन्म हुआ जिसके विकास में मूर्तिकारों ने अपनी उल्लेखनीय भूमिका अदा की। देशव्यापी शैली से आशय विभिन्न वर्गों के कलाकारों के द्वारा निर्मित कलाकृतियों में साम्यता व एकरूपता के तत्व दिखलाई देते हैं।[12]

मूर्ति निर्माण तकनीक में इन कलाकारों ने व्यापक परिवर्तन किए, इन्होंनेहैंड मॉडलिंग एवं सांचे का उपयोग जो सीमित मात्रा में हो रहा था, से आगे बढ़ते हुए एकल सांचे और दोहरे सांचे की सहायता से मूर्तियों का निर्माण किया जाने लगा।[13] मूर्तिकारों ने मृण खिलौने की मिट्टी और उसे पकाने पर भी विशेष ध्यान दिया।[14] कलाकारों ने अपनी कलाकृतियों को अधिक से अधिक अलंकरण करने का विशेषप्रयास किया एकल सांचे में गहराई कम होने के कारण आकृतियों में चिपटापन दिखाई देता है। मृणमूर्ति में आकृति के साथ फलक का प्रत्येक भाग पुष्पों एवं सुंदर डिजाइनों से अलंकृत किया गया है। अलंकरण की व्यापकता व बहुलता से कभी–कभी मुख्य आकृति का प्रतिपाद्य विषय ही छुप जाता है।[16]

काशी में राजघाट से प्राप्त लक्ष्मी एवं पांच चिन्हों से युक्त देवी अथवा मातृदेवी की मूर्ति अत्यंत महत्वपूर्ण है। राजघाट के उत्खनन से प्राप्त नाभिकाओं वाली टिकरे, किन्नर, मिथुन अंकित शरीर मलने वाला झावां तथा केले वाला टिकरा जिसमें कुकुर युद्ध, वृषभ युद्ध,मुस्टिका युद्धरत पुरुष आकृतियां, हाथियों के रथ को चलता हुआ एक अन्य छोटा हाथी तथा नारी पात्रों का चित्रण स्वयमेव अद्वितीय है।[17] दोहरे सांचे की तकनीक से निर्मित अलंकृत मोढ़े पर बैठी स्त्री मूर्ति इस युग की कला एवं निर्माण तकनीक का प्रतिनिधित्व करती है।

**कुषाण काल**

काशी की प्राचीन मृणमूर्ति कला के इतिहास मेंकुषाणों का एक विशेष योगदान है। कुषाणविदेशी थे परंतु भारतीय संस्कृति की विशेषता आत्मसातीकरण में आकर यहां की धार्मिक सहिष्णुता के वाहक बन गए। कुषाणों के समय राजनीतिक स्थिरता एवं शासको की कला के प्रति रुचि व भावना ने काशी की मृणमूर्तिकला में एक नया आयाम प्रदान किया व मृणमूर्तिकला के क्षेत्र में तीव्र विकास उत्तरोत्तर होता चला गया। महायान संप्रदाय के बढ़ते प्रभाव के कारण बुद्ध प्रतीक चिन्हों की जगह पर साक्षात मानवीय स्वरूप में मूर्ति में उतारा जाने लगा। मृणमूर्तियोंमें चिपटापन की जगह आकृतियों मेंत्रिआयामी प्रदर्शित की जाने लगी।

तक्षण कला में निर्माण तकनीक में इस काल में प्रगति के तत्व दिखाई देते हैं। मृणमूर्तिकला कला में यह निर्माण तकनीक वैसे ही पूर्ववर्ती काल की तरह चलती रही। अपितु इस काल में निर्माणगत तकनीक में सांचो को छोड़कर उसके स्थान पर फिर से हस्त निर्माण तकनीक से भोड़ी आकृतियों वाली मृण मूर्तियां बनाई जाने लगी। राजघाट के उत्खनन से प्राप्त बोधिसत्व का मस्तक जो पूर्णरूप से इस कल की मूर्तियों के सादृश्य है, इस संभावना को बल प्रदान करता है। काशी के कलाकारों ने धार्मिक विषय से संबंधित मृणमूर्तियों का निर्माण किया ही अपितु लौकिक विषय से संबंधित खिलौनों का निर्माण भी किया। इन मृणमूर्तियों में वसुधारा,कुबेर,हरीति,कामदेव,यक्ष, महिषासुरमर्दिनी,शिव,विष्णु,चामुंडा,नैगमेश इत्यादि देवी देवताओं की मूर्तियों का अंकन मिलता है।[18]

**शुंग काल**

मृणमूर्तिकारों ने विभिन्न प्रकार के मानव मस्तकों के निर्माण में अधिक रुचि ली जिसके फलस्वरूप लौकिक जीवन से संबंधित दृश्यों के चित्रण में विशेष प्रगति नहीं होपायी।शुंग काल के दृश्यों को ही यथावत चित्रण का विषय बनाया गया। फलक पर जो व्यापक अलंकरण होता था उसे कम कर दिया गया व उसके स्थान पर लौकिक विषय मनुष्य एवं उसके शारीरिक सौष्ठव को उभारने में विशेष ध्यान दिया गया, जो आगे चलकर गुप्त काल के कलाकारों के लिए आधार प्रेरणा का कार्य करेगा।

(चित्र फलक 4 – 6) शारीरिक सौष्ठव को प्रदर्शित करने में एवं नग्नता प्रदर्शित करने के संदर्भ में कलाकारों के अपने–अपने निश्चित मापदंड थे जिन्हें आधार बनाकर उन्होंने मूर्तियों में उन मापदंडों को लागू करके उकेरा है। मूर्तियों में शारीरिकमुद्राओंको उकेरने में भी सावधानी दिखाई देती है। जो उनके बढ़ते हुए महत्व की ओर रेखांकित करता है। काशी से प्राप्त प्राचीन मृणमूर्तिजो कुषाण काल से संबंधित है को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से 5 वर्गों में विभक्त किया गया है।[19]

1. पशु पक्षी आकृति वाली मातृदेवी 2.तारों की आकृति वाली मूर्तियां 3. लंबे कर्णो वालीनैगमेश मूर्तियां 4. अभय मुद्रा में देवी मूर्तियां तथा 5. बोधिसत्व मस्तक नायिकाएं,शुक्र कीड़ा में रथ स्त्री मूर्ति ,नृत्य मुद्रा में स्त्री मूर्तियां,लौकिक जीवन की प्रतिनिधित्व अन्य मूर्ति निर्मित की गयी।(चित्र फलक 7 – 9)

कुषाण काल के बाद काशी में गुप्त वंश ने राज्य किया। गुप्त काल प्राचीन भारत में स्वर्ण काल के नाम से जाना जाता है। साहित्य, कला, संगीत और भारतीय संस्कृति का प्रचार प्रसार न केवल देश अपितु देश के बाहर भी हो गया था। इसी काल में ललित कला का व्यापक विकास हुआ। गुप्त काल में कला के सभी अंगों में ऐसी दिव्यता व भव्यता का प्रवेश हुआ जो धर्म की पावन छाया में शुभ का परिचयक थी।कला सौंदर्यता मूर्ति निर्माण का एक अभिन्न अंग बन गया। गुप्त काल में काशी के मृणमूर्ति कलाकारों ने एक ऐसी कला दृष्टि का प्रदर्शन किया जो भूतकाल में कभी दिखाई नहीं देती है इन कलाकारों ने मूर्तियों के फलक पर अपने को केंद्रित न करते हुए अपितु आकृतियों को केंद्र में रखा व रेखाओं के संतुलन पर विशेष ध्यान दिया।

इस क्रम में उन्होंने अलंकरण पर विशेष ध्यान नहीं दिया फिर भी इन मृणमूर्तियों में जिसकोमलता और नूतनता का भाव प्रदर्शित हुआ है वह भव्य व अप्रतिम है।

गुप्त कालः काशी के गुप्त काल के कलाकारों ने मूर्ति निर्माण तकनीक में उन कमियों को भी दूर करने का प्रयास किया जो पूर्व से चली आ रही थी। उदाहरणतः मूर्तियों में इकहरे सांचे के प्रयोग के कारण जो चिपटापन आ रहा था उसे दूर करने के लिए इकहरेसांचे को और अधिक गहरा कर दिया गया। इससे चिपटापन तो कम हुआ ही अपितु मूर्तियां भी त्रिआयामी बनने लगी। प्रोफेसर वासुदेव शरण अग्रवाल का मानना है कि 'यह तकनीक में आए परिवर्तन के कारण ही हुआ होगा।'[20] राजघाट से उत्खनन में प्राप्त गुप्तकालीन मृणमूर्तियों में यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है गुप्त काल में काशी के कलाकारों ने एकल सांचे के साथ ही सीमित रूप में दोहरे सांचे का भी प्रयोग किया।

काशी में राजघाट से प्राप्त नैगमेश की मृणमूर्ति में कलाकारों ने सांचे व हैंड मॉडलिंग दोनों तकनीक का सहारा लेकर मूर्ति का निर्माण किया है। मृणमूर्तिकारों ने इस काल में न केवल मिट्टी के चयन का विशेष ध्यान दिया अपितु उसकी अच्छी सनाई व संतुलित पकाई पर भी विशेष ध्यान दिया इसलिए इस काल में मिट्टी के सुंदर–सुंदर खिलौने का निर्माण किया जा सका है। इन खिलौनों को रंगने से पूर्व मृणमूर्तिकार मुल्तानी मिट्टी का एक लेप कर देता था, जो पृष्ठभूमि कलर का कार्य करती थी मिट्टी के खिलौने को रंगने के साक्ष्य इस काल में विद्यमान थे। गुप्त काल में काशी के मृणमूर्तिकारों ने अपने मिट्टी के खिलौने को सुंदर ढंग से सजाने के लिए उन पर केश,नेत्र और वस्त्रों आदि का सावधानी से संतुलित अंकन किया जिससे उनकी सौंदर्य के प्रति रुचि की समझ का परिज्ञान होता है। कलाकारों ने न केवल धार्मिक विषयों को अपितुइहलौकिक जीवन से संबंधित विषयों को भी मूर्तिकला में उतारा,यहां से शिव मस्तक, अर्धनारीश्वर,मयूर पर आरूढ कार्तिकेय, गणेश, चतुर्भुजी विष्णु की मूर्ति, महिषासुरमर्दिनी, धर्मचक्रप्रवर्तन मुद्रा में बुद्धनैगमेश, सरस्वतीकी मृणमूर्तियां यहां के सांस्कृतिक जीवन की झांकी प्रस्तुत करती हैं।[21]

## निष्कर्षः

प्रस्तुत शोध आलेख के आधार पर यह निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि काशी की प्राचीन मृणमूर्तिकला अद्वितीय एवं अप्रतिम है। मृणमूर्तिकला के माध्यम से काशी के कलाकारों ने तद्युगीन जीवन के सभी सांस्कृतिक पक्षों का न केवल सजीव चित्रण किया है अपितु महत्वपूर्ण इतिहास सामग्री भी प्रदान की है, इसके आधार पर हम काशी के इतिहास के पुनर्निर्माण में प्रभावी रूप से सक्षम हो सके हैं।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची


1. नारायण, ए. के. एवं रॉय, टी.एन., एक्सकेवेशनस एट राजघाट, वॉल्यूम III (1957 – 58, 1960 – 65),बी.एच.यू. वाराणसी, 1977
2. पाण्डेय, आर.बी., वाराणसीः द हर्ट ऑफ हिन्दुइजम, ओरियन्ट पब्लिकेशन, वाराणसी,1969
3. नारायण, ए.के. एवं अग्रवाल, पी. के., एक्सकेवेशनस एट राजघाट, वॉल्यूम प्ट,भागएवं प्
   (टेराकोटाज) बी.एच.यू., वाराणसी, 1978
4. न्यूवेल, मेजर एच. ए., बनारसः द हिन्दूज होली सिटी, मद्रास, हिगिन बाथनस लिमिटेड,
   1972
5. मोतीचन्द्र, काशी का इतिहास, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई, 1962
6. मिस्त्र, सुदामा प्रसाद, प्राचीन भारत में जनपद राज्य, काशी विद्यापीठ प्रकाशन, वाराणसी,
   1968
7. अग्रवाल, वी.एस., क्ले सिलिंग्स फ्राम राजघाट, जे. एन. एस. आई. वॉल्यूम XXIII, 1961
8. अल्तेकर, ए.एस., हिस्ट्री ऑफ बनारस, जे.बी.एच.यू., वॉल्यूम ua0 I&II] 1937
9. थपल्याल, के.के., ग्रीक डिवाइसेस ऑन सम राजघाट सिलिंग्स– ए रिव्यू, जे.एन. एस.आई., वॉल्यूम XXXI ,भाग I& II 1969
10. अग्रवाल, वासुदेवशरण, राजघाट के खिलौनों का एक अध्ययन, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग– 2, वर्ष – 45, 1940
11. दास, रायकृष्ण, काशी – राजघाट की खुदाई, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग – 3, वर्ष – 45, 1940
12. सिंह, पुरुषोत्तम, राजघाट का पुरातात्विक उत्खनन, उत्तर–प्रदेश (पुरातत्व विशेषांक), मई 1981
13. हैवेल, ई.बी., बनारस द सेक्रेड सिटी, पब्लिकेशन बाय एम. के. झा फॉर थैकरस स्पिन्क एण्ड को. प्राइवेट लिमिटेड, कलकत्ता, 1968
14. अल्तेकर, ए.एस., बनारस पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट, बी.एच.यू., वाराणसी, 1947

15. सुकुल, कुबेरनाथ, वाराणसी वैभव, बिहार राष्ट्रभाषा पारिषद, पटना, द्वितीय संस्करण, 2014

16. विश्वकर्मा, ईश्वरशरण, काशी का ऐतिहासिक भूगोल, रमानंद विद्याभवन, दिल्ली, 1987

17. सिंह, बी.पी., लाइफ इन एनसियेन्ट वाराणसी : एन अकाउंट बेस्ड ऑन आर्किओलॉजिकल एविडेन्स, अध्ययन –2

18. नारायण, ए.के.एण्ड सिंह, पी. एक्सकेवेशनस एट राजघाट, वॉल्यूम ५,प्प्(1960 – 1965), बी.एच.यू., वाराणसी, 1977

19. विश्वास, टी.के. एण्ड भोगेन्द्र झा, गुप्त स्कल्पचर इन भारत कलाभवन, दिल्ली, 1985

20. अग्रवाल, वासुदेवशरण, सिलिंग्स फ्राम राजघाट, जर्नल ऑफ न्यूमेस्मेटिक सोसायटी ऑफ इण्डिया, भाग –23, वाराणसी, 1961

21. पाठक, वी.एस., रिलिजियस सिलिंग्स फ्राम राजघाट, द जर्नल ऑफ दी न्यूमिस्मैटिक सोसायटी ऑफ इण्डिया, खण्ड 19, भाग–2, वाराणसी, 1975

**Disclaimer/Publisher's Note:**

The statements, opinions and data contained in all publications are solely those of the individual author(s) and contributor(s) and not of JNGBU and/or the editor(s). JNGBU and/or the editor(s) disclaim responsibility for any injury to people or property resulting from any ideas, methods, instructions or products referred to in the content.

**चित्रक फलक 1 – 3** **चित्रक फलक 4 – 6** **चित्रक फलक 7 – 9**

*साभार– चित्र फलक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के संग्रहालय से प्राप्त।*